eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 09, September 2025

# हिन्दी साहित्य के इतिहास का नारीवादी दृष्टिकोण से अध्ययन

**डॉ0 सुमति सिंह[1]**
[1]प्रतापगढ, उ0प्र0

Received: 20 September 2025 Accepted & Reviewed: 25 September 2025, Published: 30 September 2025

## Abstract

हिन्दी साहित्य का इतिहास पारंपरिक रूप से पुरुष–केन्द्रित दृष्टिकोण से लिखा गया है, जिसमें स्त्री अनुभव, स्त्री संवेदना और स्त्री लेखन को अपेक्षित स्थान नहीं मिला। नारीवादी दृष्टिकोण इस इतिहास की पुनर्व्याख्या करता है और उन उपेक्षित स्वर को सामने लाने का प्रयास करता है जो पितृसत्तात्मक संरचना के कारण हाशिये पर रहे। यह अध्ययन हिन्दी साहित्य के विभिन्न कालोंकृआदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल और आधुनिक कालकृमें स्त्री की उपस्थिति, उसकी अभिव्यक्ति और उसकी सामाजिक स्थिति का विश्लेषण करता है। विशेष रूप से, भक्तिकाल में मीराबाई जैसी संत कवयित्रियों की स्वाधीन चेतना, आधुनिक युग में महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान आदि की रचनाओं में स्त्री विमर्श, तथा समकालीन साहित्य में स्त्री अस्मिता, समानता और अधिकारों के प्रश्नों को केंद्र में रखा गया है। नारीवादी आलोचना यह भी स्पष्ट करती है कि साहित्य केवल सौंदर्यबोध का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक संरचनाओं और शक्ति–संबंधों का दर्पण भी है। इस प्रकार हिन्दी साहित्य के इतिहास का नारीवादी अध्ययन न केवल साहित्यिक पुनर्मूल्यांकन करता है, बल्कि सामाजिक न्याय, लैंगिक समानता और स्त्री सशक्तिकरण की दिशा में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है।

**मुख्य शब्द–** नारीवाद, हिन्दी साहित्य इतिहास, स्त्री विमर्श, पितृसत्ता, स्त्री अस्मिता, महिला लेखन, लैंगिक समानता, सामाजिक न्याय

## Introduction

स्त्री विमर्श उस साहित्यिक आन्दोलन को कहा जाता है, जिसमें स्त्री अस्मिता को केन्द्र में रखकर संगठित रूप से स्त्री साहित्य की रचना की गयी। हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श अन्य अस्मितामूलक विमर्शो की भाँति ही मुख्य विमर्श रहा है, जो लिंग विमर्श पर आधारित है। स्त्री विमर्श को अंग्रेजी में फेमिनिज्म कहा गया है। शुरुआत में हिन्दी में इसके लिए, नारीवाद या मातृ–सत्तात्मक शब्द प्रचलन में रहा है। आन्दोलन के रूप में इसकी शुरुआत ब्रिटेन एवं अमेरिका में हुई। 18 वीं शताब्दी में औद्योगिक क्रान्ति के दौरान कई किस्म के संघर्ष हुए। उनमें एक संघर्ष स्त्री–पक्ष ने भी किया। उन्होंने धर्मशास्त्र एवं कानूनों के द्वारा खुद को पुरुषों के मुकाबले शारीरिक, और बौद्धिक धरातल पर कमजोर मानने से इन्कार कर दिया।

1792 ई0 में फ्रांसीसी क्रांति के महिला मुक्ति आन्दोलन से प्रभावित होकर 1857 ई0 में, संयुक्त राज्य अमेरिका में महिलाओं और पुरषों के समान वेतन को लेकर हड़ताल हुई थी द्य इसी दिन को बाद में अन्तराष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मनाया गया द्य इसी के साथ विश्व भर आन्दोलन की शुरुआत हो चुकी थी। 1848 ई० में कुछ, प्रसर, महिलाओं ने बकायदा एक सम्मेलन करके नारी मुक्ति से सम्बन्धित एक वैचारिक घोषणा पत्र जारी किया। इन महिलाओं में एलिजाबेथ कैन्डी, स्टैण्टन, लुक सिया काफिनमोर प्रमुख हैं द्य इस सम्मेलन मे यह निर्णय लिया गया कि स्त्री को सम्पूर्ण एवं के कानूनी हक दिए जाएँ उन्हें पढ़ने

के अवसर दिए जाएँ, बराबर मज़दूरी और वोट देने का अधिकार इत्यादि क्रांतिकारी मांगें पारित की गयी। यह आन्दोलन तेजी से सारे यूरोप में फैल गया, लेकिन वास्तविक सफलता 1920, में जाकर मिली। जब अमेरिका में स्त्रियों को वोट डालने का अधिकार मिला। 1859 ई0 में पीटर्सबर्ग में अगला आन्दोलन हुआ। 1908 में 'वीमेन्स फ्रीडम लीग' की स्थापना ब्रिटेन में हुई। जापान में इस आन्दोलन की शुरुआत 1911 में हुई, 1936 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित मैडम क्यूरी सहित तीन महिलाएँ फ्रांस में पहली बार मंत्री बनीं।

इस प्रकार विश्व के अनेक देशों में इस आन्दोलन की शुरूआत हो चुकी थी, लेकिन 1951 में संयुक्त राष्ट्र का महासभा ने जब भारी बहुमत से महिलाओं के राजनैतिक अधि कारों का नियम पारित किया, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नारी मुक्ति के आन्दोलन का प्रारंभ तभी से माना जाता है। 1975 में पूरे विश्व। मैं अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के रूप में मनाया गया, जिसके परिणाम स्वरूप कोपहेगन मैं पहला अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन, नैरोबी में दूसरा अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन 1985 में और शंघाई में तीसरा 1995 में सम्मेलन हुआ। भारत में नारीवादी आंदोलन की शुरुआत नवजागरण के साथ हुई। राजा राममोहन राय ने 1818 में सती प्रथा के विरुद्ध किया और और उनके प्रयत्नों के फल स्वरुप 1829 में लाइ विलियम बैंटिक ने सती प्रथा को गैर कानूनी घोषित किया। बाल विवाह, विधवा विवाह और बहू पत्नीक प्रथा के विरुद्ध लड़ते हुए राजा राम मोहन रॉय स्त्री के पक्षधर नजर आते हैं। स्वामी विवेकानंद एवं स्वामी दयानंद सरस्वती ने भी स्त्री शिक्षा पर जोर दिया। इस प्रकार अमेरिका से शुरू हुआ या आंदोलन भारत में स्त्री जाति की चेतना का स्वर बन गया।

स्त्रियों की स्वतंत्रता व समानता के लिए कई महिला सुधारकों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका आदि की जीन में रमाबाई ताराबाई शिंदे सावित्रीबाई आदि महत्वपूर्ण है।

पंडित रमाबाई ने 1882 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'स्त्री धर्म नीति' के माध्यम से स्त्रियों को जागृत कर उन्हें स्वावलम्बन एवं स्वतंत्रता क पाठ का पाठ पढ़ाया। उन्होंने स्त्री शिक्षा को लेकर कड़ा परिश्रम किया। रेस स्त्रियों के लिए समान अवसर व समान वेतन प्रदान करने के पक्ष में लगातार लड़ती रही। सन 1883 है उन्होंने पारी सत्ता के विरुद्ध में 'द हाई कास्ट हिंदू वूमेन' पुस्तक लिखी। विधवा और परित्यत्तकाओ के लिए उन्होंने 'शारदा सदन' की स्थापना की। वे स्त्री–पुरुष के परस्पर सहयोग व समानता के भाव पर बोल देवी हुए कहती है, किं दृ" यह विस्तृत सांसारिक जिंदगी किसी महाकाव्य की तरह है, जिसके दो पहलू है। वाम और दक्षिण। राम पहलू नारी और पहलू पुरुष दक्षिण। जब दोनों पहलू संतुलन में कार्य करते हैं सभी प्रसन्नता और सुख का अनुभव हो सकता है।"

ज्योतिबा फुले व उनकी पत्नी सावित्रीबाई फुले ने स्त्रियों के सुधार के लिए अनेक महत्वपूर्ण कार्य किया। सावित्रीबाई फुले ने भी स्त्रियों के सुधार के लिए महिला सेवा मंडल की स्थापना की। फुलें दम्पत्ति में सन 1848 से लेकर सन 1952 तक लगभग 18 पाठशाला को खोला। उन पाठशालाओं का संचालन व प्रबंध सावित्रीबाई फुले ही किया करती थी। उन्होंने स्वयं ही पाठशालाओं का पाठ्यक्रम बनाया और उसे कार्यान्वित भी किया। आरंभ में लड़कियों की शिक्षा का विरोध तो हुआ किंतु बाद में लोग स्त्री शिक्षा के महत्व को समझने लगे। और कन्यशालाएं अधिक संख्या में खुलती चली गई। आगे चलकर सन 1855 में ज्योतिबा फुले ने पुणे में रात्रि पाठशाला खोली। इस पाठशाला में दिनभर काम करने वाले मजदूर किसान और ग्रहणियां पढ़ने आती थी। यह भारत की पहली रात्रि पाठशाला थी। ज्योतिबा फुले का मानना था कि

जब" तक महिलाएं शिक्षित नहीं हो जाती तब, तक सच्चे अर्थों में समाज शिक्षित नहीं हो सकता। एक शिक्षित माता जो सुसंस्कार दे सकती है, उन्हें हजार अध्यापक किया गुरु नहीं दे सकते। जब तक देश की आदि जनसंख्या (नारी समाज) शिक्षित नहीं हो जाती तब तक देश कैसे प्रगति कर सकता है?" वे मानते थे कि स्त्री व पुरुष जन्म से ही स्वतन्त्र है, इसलिए दोनों को सभी अधिकार सामान्य रूप से रोकने को अवसर मिलना चाहिए। उन्होंने तत्कालीन समाज में विधवाओं की दया दशा को देखकर उनके केस मुंडन का विरोध किया। विधवाओं के पूर्ण विवाह का समर्थन कर उनकी स्थिति में सुधार करने का प्रयत्न किया।

ताराबाई शिंदे ने सन 1882 में अपनी रचना स्त्री पुरुष तुलना के माध्यम से तत्कालीन समाज में स्त्री की वास्तविकता स्थिति का चित्रण किया। लिंग के आधार पर स्त्री पुरुष के आथी करो को लेकर जो भेदभाव हो रहा था उसकी उन्होंने कड़ा विरोध किया। विधवाओं पर किए जाने वाले अत्याचारों को उन्होंने डटकर मुकाबला किया तथा उनके पूर्ण विवाह के लिए आवाज उठाई। ताराबाई शिंदे स्वयं विधवा थी। इसलिए महिलाओं पर उठने वाले अत्याचारों को भली भांति व समझती थी और उन अत्याचारों से होने वाली पीड़ा से परिचित थी। इसलिए बस्तियों के मन को भली–भांति समझती थी। ऐसे धर्म और धार्मिक कट्टरताओं पर कड़ा प्रहार करती थी जो एक विधवा को ऐसा न किया जीवित के जीने पर विवश करते थे। इस आंदोलन में इन स्त्रियों ने न केवल महत्वपूर्ण भूमिका निभाई अपितु पुरुष वर्चस्व की लक्ष्मण रेखा लंकर काफी आदत में देश की लड़ाई में भाग लिया, उन्नीसवीं सदी आते–आते एनी बेसेंट सरला देवी सरोजिनी नायडू और इंदिरा गांधी जैसे महिलाएं राजनीति में। सक्रिय हुई तथा वह अपने दखल से अपनी अमिट छाप छोडी।

नारीवादी साहित्य की अवधारणा नई साहित्य से भिन्न है। नारीवाद वास्तव में एक समाजशास्त्रीय संकल्पना है। किंतु हिंदी साहित्य के नजरिए से विचार करें तो पुरुष प्रधान संस्कृति से विमुक्त होकर नर से पीड़ित नारी का आक्रोश संघर्ष, व्यथा संवेदना, तनावं औरत के प्रति होने वाले अपमान प्रस्हुत करना नारीवाद साहित्य का लक्ष्य है। नारीवाद एक आंदोलन संघर्ष और विमर्श के रूप में यह प्रयास करता है कि महिलाओं को भी सम्मान मनुष्य माना जाए और उनकी गरिमा स्वतंत्रता समानता उनके जैविक आधार पर न होकर उनके वैयक्तिकु रूप में होनी चाहिए। नारीवादी साहित्यिक आलोचना साहित्य को उसके उत्पादन को पुरुष प्रधान दृष्टिकोण से देखती है। यह दिखाने के लिए विहित कार्यों की फिर से जांच करता है कि लैंगिक। रूढ़िवादिता उनके कामकाज में कैसे शामिल है।

नारी प्रकृतिरूपा है, प्रकृति परम पुरुष की इच्छा का प्रतिफल है। प्रसिद्ध है कि जगन्नियता को जब एकाकी रमने कुछ ऊब सी हुई है, तो वे स्वकीय इच्छा–शक्ति से एक से दो हो गए उसी तरह से प्रकृति की सुरुचिपूर्ण रमन सृष्टि है। पुरुष की वह पूरक है उसे आदिकाल से समस्त सृष्टि की संचालिका शक्ति माना जाता है। नारी के बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा, सकती। नारी के संयोग से ही संसार आगे बढ़ता है।

नारीं हमेशा से ही पुरुष की प्रेरणा रही है। नारी का शारीरिक सौन्दर्य अगर पुरुष को लुभाता है , उसकी शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति करता है तो नाही का आत्मिक सौन्दर्य पुरुष के कार्यों की प्रेरणा भी बनता है। नारी पुरुष को निराशा के क्षणों में आशा देती है। दुख में दिलाशा देती है और उसके कर्म में

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 09, September 2025

उत्साह भरती है। प्रत्येक शब्द का इतिहास है। उसका स्वतन्त्र अस्तित्व है। शब्द अपने वाच्य के स्वरूप का भी संकेत करता है। नारी अर्थ के बोधक शब्द भी नारी के स्वरूप पर बहुत प्रकाश डालते हैं। कवियों की दृष्टि में नारी माया दृ सी, दुर्बोध, प्रकृति–सी बहुरूपी, बहुत, ही सहानुभूति सी, सरल रही है। यदि शब्दों के विकास के साथ मानव–सभ्यता के विकास का अध्ययन किया जाय तो जान पड़ेगा कि नारी उतनी ही अंश में रहस्यमयी है, जितने अंश की कोई भी वस्तु, । विषय समाज में नियम स्थिति होने के कारण नारी के विभिन्न स्वरूप होते गए। मानव को नारी के साथ शारीरिक, रागात्मक, और धार्मिक सम्बन्ध होने के कारण नारी के स्वरूप भेद हुए। ये भेद प्रभेद इतने जटिल बन गये नारी जटिलबन गये हैं कि आज शब्द के आधार पर नारी के वास्तविक स्वरूप को समझना जटिल है। किसी एक शब्द से नारी के स्वरूप की अभिव्यक्ति नहीं, हो सकती। फिर भी, जिस, तरह एक छोटे से ओस–विन्दू से सम्पूर्ण सूर्य मण्डल प्रतिबिम्बित हो जाता है उसी प्रकार नारी–वाचक छोटे से छोटे शब्द से भी उसकी जाति उसके गुण उसकी क्रिया अथवा इच्छा झलक जाती हैं। साथ ही साथ नाम रखने वाले समाप्त की मानसिक स्थिति, बौद्धिक, उन्नति और सांस्कृतिक चेतना भी व्याप्त हो जाती है। प्राणी जगत से नारी शद्ध नर के समान्तर है। इसका प्रयोग, स्त्री लिंग वाची यादा प्राणियों के रूप में होता है, किन्तु मानव समाज में नाही शब्द इस सामान्ये मे अर्थ में गृहित नहीं है क्योंकि उसका स्थान नर से कही बढ़कर है। यही नहीं रूप आकार शरीर संगठन कार्य व्यापार एवं जीवन–यापन की विविध स्थितियों में नारी –विद्याता की उच्चतम् परिकल्पना सिद्ध हुई है, फिर भी नारी की परिभाषा और स्वरूप को अच्छी तरह जानने के लिए नारी शब्द व्युत्पत्ति को जानना बहुत आवश्यक है।

नारी शब्द नर से उत्पन्न माना जाता है । यास्क ने नर शब्द को नृत्य से बनाया हैं दृ नरारू नृत्यन्ति कर्मसु अर्थात काम की पूर्ति के लिए मनुष्य हाँथ पैर नचाता है। नारी के लिए स्त्री शब्द का प्रयोग भी होता है। यह शब्द उसे पुरुष के लैंगिक सहयोगी के रूप में स्त्री की व्युत्पत्ति के विषय में निरूक्त कार का मत है, कि स्त्री शब्द स्त्रैय धातु से बना हेदु यास्क के मतानुसार स्त्रैय का अर्थ लज्जा से सिकुड़ना है। 'टीकाकार दुर्गाचार्य नारी की स्त्री संज्ञा उसके लज्जाशील होने के कारण बनते हैं, किन्तु पाणिनि धातु पाठ में स्वाये का अर्थ लजाना नहीं मिलती। धातु पाठ के अनुसार स्वाये शब्द का अर्थ है 'शब्द करना' तथा इकट्ठा करना। जान पड़ता है, नारी का स्त्री नाम संभवतः उसके वाचाल होने के कारण ही पड़ा। महर्षि पतंजलि ने अपनी अष्टाध्यायी में समझाया है, कि नारी को स्त्री इसलिए कहते कि गर्भ का स्थिति उसके भीतर रहती है। उन्होंने एक दूसरी व्युत्पत्ति, भी की है दृ शब्द स्वरूप दृ रूप संगथाना गुणाना स्वायानं–संघाटन दृ स्त्री अर्थात शब्द स्पर्श, रूप, रस, और गंध इन सबका समुच्चय ही स्त्री है, यह स्पष्ट हे कि नारी शब्द की व्युत्पत्ति अनेक शब्दों से मानी गयी है।

1. प्रेमचंद जी के मतानुसार "पुरुष विकास के क्रम में नारी के पीछे–पीछे है। जिस दिन वह भो पूर्ण विकास तक पहुँचेगा वह स्त्री हो, जायेगा, वात्सल्य, स्नेह, कोमलता, दया, इन्हीं आधारों पर सृष्टि धमी हुई है और ये स्तियों के गुण हैं।"

2. स्वामी विवेकानन्द्र के अनुसार– "स्वी–पूजन से ही समाज की प्रगति होती है। जिसे देश अथवा समाज में स्त्री–पूजन नहीं होता, वह देश अथवा समाज, ऊँचा कभी नहीं उठ सकता। पश्चिमी देशों के अधः पलन का अध–पन कारण उन्होंने शक्तिरूपिणी स्त्री की अवहेलना माना है।"

3. रवीन्द्रनाथ ठाकुर के मतानुसार "उन्होंने अपनी रचना मानसी गीत में नारी को भगवान की अद्‌भुद कृति माना है।"

4. महादेवी वर्मा के अनुसार दृ "पुरुष प्रतिशोधमा शोध है, स्ती क्षमा । पुरुष शुष्के कर्त्तव्य है स्वी सरस सहानुभूदि है। पुरुष ब्रहमा हैं तो स्त्री ह्दय की प्रेरणा है।"

'नारी' शब्द नर से उत्पन्न माना जाता है तथा चेतना शब्द का अर्थ है प्राणी–माता में रहने वाला वह तत्व है, जो उसे निर्जीव जड़ पदार्थों से भिन्नता प्रदान करता है। नारी दृ चेतना का अर्थ हुआ नारी से विहित जागरूक शक्ति। नारी समाज तथा परिवार का एक अभिन्न अंग हैं । जब तक अपने अधिकारों तथा कतव्य के प्रति सचेत नहीं होगी, तब तक न परिवार ठीक से चल है तब ना और न ही समाज। प्राचीन काल से आज तक नारी में चेतना का निरन्तर विकास होता रहा है। वह निरन्तर, विकास की सीढ़ियों पर चढ़ती रही है। नारी की प्रशंसा में शिव जी बतलाते हैं, कि– नाही के समाननयोग है, न जप है, न तप है न बीधे है। यही इस संसार की सर्वाधिक पूजनीय देवता है क्योंकि वह पार्वती का रूप है। उसके समान न कुछ था, न ही कुछ होगा।

प्रारम्भ में नारी एक विलास की सामग्री थी। नारी के विभिन्न रूप माँ, बहन, पुनी, आदि अधिक विकसित न हो सके थे। नारी का क्षेत्र बहुत ही संकुचित था। स्त्रियों को घर की चार दीवारी, के अन्दर ही रहना होता था। उन्हें पढ़ने–लिखने नौकरी आदि की किसी भी प्रकार की आजादी नहीं थी। नारियाँ एक प्रकार की घुटन भरी जिन्दगी जी रहीं थीं। ये नारी–चेतना का ही विकास है कि नारी वर्तमान में कंधे से कंधा मिलाकर पुरुषों, के साथ कार्य कर रहीं हैं। नारी के मन में पुरुष की दासता से मुक्त होने की ललक पैदा होती है। नारी अब, शिक्षित भी हो चुकी है कर्मभूद्धि उपन्यास की 'सुखदा' पुलिस के सामने खड़ी होकर कहती है– क्यों भाग रहे हो? यह भागने का समय नहीं है। छोटी खोलकर खड़े होने का समय है। दिखा दी कि तुम धर्म के नाम पर किस तरह प्राणों का होम करते हो। भागने वालों की कभी विजय नहीं होती। इस समय स्त्रियाँ जागरूक हो चुकी हैं। वह पुरुषों में शक्ति का संचार है। एक बार एक फ़्रेंच लेखक ने भी लिखा था, कि अगर किसी देश की अवस्था का पता लगाना हो हो, वहाँ की स्त्रियों की दशा जानना जरूरी है। इसका तात्पर्य है, कि जो समाज जितना अधिक उन्नति शील होगा, वहाँ स्त्रियों की दशा उतनी ही विकसित होगी।

पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव से भारतीय नारीने नई रोशनी नयी सभ्यता के प्रसार में देखा कि वह पति की दासी नहीं है। समाज में नारी को भी पुरुष के समान अधिकार है। बान– विवाह, अनमेल विवाह, विधवा–विवाह और वेश्यावृत्ति के विरुद्ध आन्दोलन चरम पर था। प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने लिखा है दृ स्त्री– पुरुष एक होकर रहें, दोनों में मतभेद न होनो पावे। स्त्री को गर्व न हो कि मैं स्वामी से बड़ी हूँ और न स्वामी को अभिमान हो कि ईश्वर ने सब बुद्धि मेरे ही हिस्से में रखी है। स्त्री घर की मूलकिन है, और पुरुष बाहर का, लेकिन दोनों में मतैक्य हो,, दोनों इस पवित्र प्रेम–सूत्र में बंधे हों, जहाँ न राज है, न अधिमान, न देष और न कलह। भारतीय दर्शन संस्कृति एवं समाज में नारी को बहुत गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है। दर्शन नारी को प्रकृतिरुपा मानता है। वह सृष्टि के मूल में है। पुरुष के रागात्मक जीवन में नारी सदैव उच्च्च स्थान की अधिष्ठाती रही है। वह परिवार की संचालिका है।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 09, September 2025

वैदिक साहित्य में नारी के पत्नी रूप को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। वहाँ प्रत्येक गृहस्थ द्वारा कन्या की कामना की गयी है। पुत्र एवं पुत्री में कोई भेद नहीं माना गया। पुराण काल मे कन्या को देवी रूपा स्वीकार किया गया है। जबकि श्रीमद् भागवत में नारी के कन्या रूप की गुणगान है। इस प्रकार नाही चेहना की परम्परा वेदों, पुराणों से चली आ रही है। अंग्रेजी प्रशासन ने शिक्षा मे सुधार लाकर नारी को जाग्रत किया और नारी ने स्वाधीनता आन्दोलन, में पुरुष के समान प्रयत्न किये। स्वतन्त्रता के बाद भारतीय नारी ने अधिकधिक प्रगति की ओर कदम बढ़ाए और देश के उच्चतन्य प्रशासकीय पदों पर काम किया व अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी काम किया। और अपने दुशल व्यक्तित्व का परिचय दिया। स्त्री जागृति हुई, उसे पुरुष के समान अधिकार मिले। आज की नारी परम्परा की लीक पाटने की अपेक्षा नयी चुनौतियों भरी राहों पर चलने का खतरा उठाने को तत्पर है। परिणाम स्वरूप नारी के विकास की गति बढ़ी उसमें अधिकार बोध विकसित हुआ।

**हिन्दी साहित्य में नारी चेतना** – हिन्दी साहित्य के आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल, आधुनिक काल के साथ–साथ हिन्दी गध साहित्य में भी भारी–चेतना का विकास हुआ है, उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

आदिकाल, हिन्दी का आदि काव्य वीरगाथाओं तथा धामिक उपदेशों के रूप में लिखा गया है, फिर भी तत्कालीन वातावरण एवं परिस्तियों के अनुसार इस काव्य में नारी के वीरांगना एवं कामिनी, दोनों रूपों के दर्शन होते हैं। इस काल में अधिकांश साहित्य राजकुमारियों के अपहरण तथा उनके फलस्वरुप होने वाले, युद्धों का वर्णन मिलता है। रासो काव्य की नायिकाओं के जीवन भी नारी–दुर्दशा की कहानी ही कहते हैं। उपेक्षित नारीत्व इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप श्रृंगार की प्रेरणा बन गया था।

भक्तिकाल, इस काल के साहित्य में नारी मुख्यतः दो रूपों में अंकित हुई। एक ओर तो वह सामान्य नारी रूप में निन्दा एवं उपेक्षा की पाता रही तो दूसरी ओर आराध्य देवताओं की संगिनी के रूप में सम्मानित भी हुई। कबीर ने नारी को नरक का द्वार माना है। मलूकदास नारी के नेत्र को भयानक कहते हैं तथा दादूदयाल संसार को पतंगा तथा कनक कामिनी को दीपक की लौ बताते हैं। प्रेममार्गी कवि जायसी ने नारी को ब्रह्म का प्रतीक माना है। इसकाल के कवियों के नारी विषयक दृष्टिकोण में मतभेद ही है । एक और तो उसे मुक्ति–मार्ग की बाधा मानकर उसकी उपेक्षा की है तो दूसरी ओर सीता, पार्वती की वन्दना भी की है।

रीतिकाल, रीतिकाल में भक्तिकाल की उपेक्षित नारी रीतिकालीन मुक्तक कव्य में आकर्षण की केन्द्र विन्द्व 'नायिका' बन गयी। और ये मुक्तिकार नायिका भेदौ पभेद एवं नख–शिख वर्णन में अपनी प्रतिभा का चमत्कार दिखाने लगे। इन कवियों ने राधाकृष्ण की लीलाओं का जो वर्णन किया है, उसमें भी आध्यात्मिकता की आड़ में नारी के प्रति वासना ही व्यक्त हुई है। उस विलासपूर्ण वातावरण मे नारी का केवल कॉमिनी एवं प्रेयसी रूप ही शेष रह गया। इन कवियों की दृष्टि न तो सीता के पतिव्रत पर गई, न सावित्री के सहीन पर, न पार्वती की पावनता पर, और नही यशोदा की ममतामयी मातृ गरिमा पर। आधुनिक काल – इस युग में नारी के प्रति परम्परागत दृष्टिकोण होते हुए भी नारी निपट भोग्या या उपेक्षित नहीं रही। रीतिकाल की नारी चौबीस घंटे भोग–विलास की वस्तु थी और द्विवेदी युग की नारी सती सीता और सावित्री की भांति मात्र वन्दनीया। यह बदलते हुए, सामाजिक सन्दर्भों की देन है कि छायावादी कवियों की नारी आदर्श

और कल्पना के उच्चासन पर आसीन न सुकुमार भावना और पुरुष की चिरसंगिनी प्रसाद के काव्य में नारी के पत्नी प्रेयसी गृहिणी आदि का चित्रण मिलता है। दूसरी तरफ कथा साहित्य में प्रेमचन्द्र के  युग की नारी ने भारतीय समाज की परम्परागत मान्यताओं को तोडा है। उसने स्वावलम्बी बनने का प्रयास किया है। नारी सम्पूर्णता का दूसरा पहलू है। वह न केवल . पुरुष को पूर्णता प्रदान करती है बल्कि दुनिया का आद्य प्रतिनिधित्व भी उसके हाँथों में हैं। अनादिकाल से नारी पूजनीय रही है। इसीलिए पुरुष को यदि शिव का प्रतिरूप माना गया तो नारी को शक्ति का। नारी का जितना शोषण पिछले– 50–55 वर्षों में हुआ है वह नारी के प्रति विकृत मानसिकता का ही पर्याय है परन्तु फिर भी नारी की उत्पत्ति ही पुरुष के अस्तित्व की पहचान है। नारी ही वह चेतना प्रद शक्ति है. जो सृष्टि संरचना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

**संदर्भ सूची–**

1. डॉ० रत्नाकर पाण्डेय, हिन्दी साहित्य रू सामाजिक चेतन पृष्ठ सं0–157
2. वृहद–संहिता पृ० सं०–74
3. डॉ. रेखा कुलकर्णी, हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी, पृष्ठ संत 84
4. वही पृष्ठ संख्या, 70
5. डॉ0 सो० जे० एम० देसाई, आधुनिक हिन्दी काव्य में नारी, पृष्ठ सं0–38
6. डॉ० सो० जे० एमत देसाई, आधुनिक हिन्दी काव्य में नारी, पृष्ठ– 39
7. वही, पृष्ठ सं0 दृ 40
8. वही, पृष्ठ 41
9. डॉ. सो० जे० एम० देसाई आधुनिक हिन्दी काव्य में नारी, पृ० संख्या–43
10. पृष्ठ सं0–44
11. डॉ0 देवेन्द्र ठाकुर, प्रसाद के नारी चरित्र पृष्ठ संख्या=149
12. मैथिली शरण गुप्त, व्यक्ति एवं रचना पृ० –127